Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
April to June 2025, E-Journal, Vol. I, Issue L (50), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का महिला मुक्ति विमर्श

नरेन्द्र सिंह पंवार*

* शोधार्थी, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रस्तावना – अम्बेडकर आजादी के संघर्ष के दौरान सत्ता हस्तांतरण का सवाल, स्वाधीन भारत का स्वरूप और उसमें जनता की नियति, आमजन की वास्तविक सामाजिक और आर्थिक मुक्ति जैसे सवालों पर शीर्ष नेतृत्व के साथ हुए संवाद, बहस और विवाद में यह स्पष्ट हो चुका था कि महज राजनैतिक आजादी से इस देश की जनता को विशेष रूप से महिलाओं को सामंती उत्पीड़न से मुक्ति नहीं दिलाई जा सकती है। डॉ. अम्बेडकर ने भारत में स्त्रियों की पराधीनता और जाति आधारित पितृसत्तात्मक जकड़न की कठोरता के इतिहास को एक साथ जोड़कर देखा। ब्राह्मणवादी वर्चस्व की शक्तियों द्वारा वर्णव्यवस्था को मजबूत और दीर्घजीवी बनाने की प्रकिया में स्त्रियों को उनके नैसर्गिक अधिकारों से वंचित करके उन्हें दास की श्रेणी में ला दिया गया। स्त्री के अधिकारों और स्वच्छंदता पर प्रतिबंध लगाये बिना जाति व्यवस्था को कड़ाई से लागू कर पाना संभव नहीं था क्योंकि वर्ण-व्यवस्था का निर्धारण सजातीय विवाह से होता है और सजातीय तथा बहिर्गोत्रीय विवाह संस्था को अमल में लाये बिना वर्ण नामक श्रेणी को बंद जाति में तब्दील नहीं किया जा सकता।

सजातीय विवाह व्यवस्था को कड़ाई से लागू करने की प्रक्रिया को डॉ. अम्बेडकर 'वर्ण' से 'जाति' में परिवर्तन कहते हैं। शूद्रों और स्त्रियों की स्थिति में सर्वाधिक सुधार बौद्ध धर्म के व्यापक प्रसार के साथ आया। भारत में बौद्ध दर्शन व धर्म के उदय को डॉ. अम्बेडकर क्रांति के रूप में स्वीकार करते हैं। बौद्ध धर्म ने सनातन धर्म के प्रत्येक अमानवीय आधार स्तम्भ पर गहरी चोट की, जिसका प्रभाव समाज पर पड़ना अवश्यंभावी था। यहां यह ध्यान रखना जरूरी है कि बौद्ध धर्म के उदय से पहले हिन्दू धर्म में ब्राह्मण वर्चस्व के बढ़ते चले जाने के कारण शूद्रों और स्त्रियों की दशा खराब होनी प्रारंभ हो गई थी। बौद्ध धर्म ने एक तरह से इस प्रक्रिया पर रोक लगा दी और हिन्दू धर्म की विभेदकारी सामाजिक नीति के स्थान पर एक समावेशी समाज व्यवस्था की नींव डाली। बौद्ध काल मे शूद्रों-स्त्रियों की स्थिति के बारे में डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं कि 'वैदिक काल की अवनति के दिनों में शूद्रों और स्त्रियों का स्थान बहुत नीचे हो गया था'।

बौद्ध धर्म के अभ्युदय ने इन दोनों की स्थिति में एक महान परिवर्तन ला दिया। संक्षेप में कहें तो बौद्ध काल में शूद्र संपत्ति, विद्या अर्जित कर सकता था और यहां तक कि राजा भी बन सकता था बल्कि वह समाज में सर्वोच्च स्थान तक पहुंच सकता था, जो वैदिक शासन में ब्राह्मण के अधिकार में होता था। बौद्ध भिक्षु व्यवस्था वैदिक ब्राह्मण व्यवस्था का प्रतिरूप थी। ये दोनों ही व्यवस्थाएं अपने-अपने धर्म की व्यवस्थाओं में पद और प्रतिष्ठा की दृष्टि से एक-दूसरे के समान थीं। वैदिक काल में शूद्र, ब्राह्मण बनने की कभी आकांक्षा नहीं कर सकता था लेकिन भिक्षुओं के बौद्ध धर्म के द्वार शूद्रों के लिए खुले थे। बहुत से शूद्रों ने जो वैदिक काल में ब्राह्मण नहीं बन सके, बौद्ध धार में भिक्षु बने और उन्होंने ब्राह्मण के समान पद प्राप्त किया। इसी प्रकार के परिवर्तन स्त्रियों के संबंध में भी मिलते हैं। बौद्ध धर्म में विवाह एक संविदा थी। बौद्ध धर्म के अनुसार वह संपत्ति अर्जित कर सकती थी। वह विद्या अर्जित कर सकती थी और जो सबसे विलक्षण बात थी वह बौद्ध धर्म में भिक्षुणी बन सकती थी और उसी पद और प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सकती थी, जो ब्राह्मण को प्राप्त थी। शूद्रों और स्त्रियों को उंचा स्थान दिलाने में बौद्ध धर्म के सिद्धांतों का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि बौद्ध धर्म के विरोधी इसे शूद्र धर्म (अर्थात निम्न वर्ग के लोगों का धर्म) कहते थे। डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं- ब्राह्मणवाद ने अंतर्विवाह और सहभोज पर रोक लगाने का काम पशु की तरह नृशंस होकर किया। यदि किसी को उसमें संदेह हो, तो अनुरोध है कि मनु की भाषा पर विचार करना चाहिए। शूद्र स्त्री के संबंध में मनु घृणा व्यक्त करता है उस पर ध्यान दीजिये, वह कहता है कि वह अशुद्ध है जैसे शुक्र या मूत्र। अंतर्विवाह और सहभोज का निषेध दो स्तम्भ हैं जिन पर जातिप्रथा टिकी हुई है।

जातिप्रथा और अंतर्विवाह तथा सहभोज से संबंधित नियम एक-दूसरे से ऐसे जुड़े हुए हैं, जैसे उद्देश्य के साथ उसको पूरा करने वाले उपाय। निश्चय ही ये उद्देश्य किन्हीं अन्य उपायों द्वारा पूरे नहीं किए जा सकते थे। इन उपायों की योजना से यह स्पष्ट होता है कि ब्राह्मणवाद का उद्देश्य जाति प्रथा को जन्म देना था और यही उसका अंतिम लक्ष्य था। ब्राह्मणवाद ने सामाजिक व्यवस्था में अन्य परिवर्तनों का भी सूत्रपात किया। अगर इन परिवर्तनों का प्रयोजन वही था जिसकी संभावना की चर्चा मैंने अभी की है, उन्हें देखिये : तब इस तथ्य को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि ब्राह्मणवाद जातिप्रथा को कायम रखने को लेकर इतना अधिक आतुर था कि इसने इसके लिए प्रयुक्त साधनों के उचित या अनुचित, नैतिक या अनैतिक होने की कोई परवाह नहीं की। मैं लड़कियों के विवाह और विधवाओं के जीवन के संबंध में मनु जो नियम बनता है उन्हें देखिये वह पिता दोषी है जो उचित समय आने पर (अपनी पुत्री को) विवाह में नहीं देता है।

समान जाति के श्रेष्ठ और सुन्दर वर को अपनी पुत्री, चाहे उसकी आयु उचित न भी हो, अर्थात वह ऋतुमती न हुई हो, निर्धारित विधि के अनुसार दे। इस नियम के अनुसार मनु यह निर्देश देते हैं कि चाहे कोई लड़की गर्भधारण

करने योग्य न हुई हो, अर्थात चाहे बच्ची ही हो, तब भी उसका विवाह कर देना चाहिए। विधवाओं के संबंध में मनु निम्नलिखित नियम घोषित करता है वह (अर्थात विधवा) अपने सुख के लिए स्वेच्छापूर्वक शुद्ध पुष्पों, कंदमूल और फलों का आहार कर अपने शरीर को क्षीण कर ले, लेकिन वह अपने पति के निधन के बाद किसी दूसरे पुरुष का नाम भी न ले। परन्तु जो विधवा संतानोत्पति की इच्छा से दुबारा विवाह करके अपने पति का अनादर करती है, वह इस लोक में निंदा का पात्र बनती है और वह (स्वर्ग में) अपने पति के सामीप्य से वंचित रहेगी। पति के अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुष से उत्पन्न स्त्री की संतान उसकी संतान नहीं कहलाती, पत्नी के अतिरिक्त किसी दूसरी स्त्री से उत्पन्न किसी पुरुष की संतान उसकी नहीं कहलाती, पतिव्रता स्त्री का दूसरा पति कहीं भी नहीं निर्धारित है। डॉ. अम्बेडकर बताते हैं कि मनु द्वारा स्त्रियों के लिए बनाये गए नियम बिल्कुल नए थे। बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में लड़कियों का विवाह ऋतुमती होने के बाद ही किये जाते थे, बल्कि तब किये जाते थे जब लड़कियों की आयु इतनी हो जाती थी कि उन्हें वयस्क कहा जा सके। बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में विधवाओं के पुनर्विवाह पर कोई रोक नहीं थी। संस्कृत भाषा में 'पुनर्भु' (अर्थात वह स्त्री जिसका दूसरा विवाह हुआ हो) और 'पुनर्भव' (अर्थात दूसरा पति) जैसे शब्द मिलते हैं। इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध पूर्व ब्राह्मणवाद में इस प्रकार का विवाह एक आम बात थी। लेकिन बौद्ध धर्म द्वारा संचालित की गई सामाजिक क्रांति को विफल कर जो बौद्ध-पश्चात ब्राह्मणवाद विकसित हुआ उसने पूरी व्यवस्था को उलट दिया।

इस संबंध में अम्बेडकर के विचार देखें- 'पुष्यमित्र की ब्राह्मण क्रांति का उद्देश्य चातुर्वण्य की प्राचीन सामाजिक व्यवस्था का उद्धार करना था, जिसे बौद्ध शासन काल में कसौटी पर परखा जा रहा था। लेकिन जब बौद्ध धर्म पर ब्राह्मणवाद ने विजय प्राप्त कर ली, तब उसे चातुर्वण्य-व्यवस्था को उसी रूप में, जिस रूप में वह पहले थी पुन: स्थापित करने पर भी संतोष नहीं हुआ। बौद्ध पूर्व समय में चातुर्वण्य-व्यवस्था एक उदार व्यवस्था थी और उसमें गुंजाइश थी। इसका कारण यह है कि इसका विवाह व्यवस्था से कोई संबंध नहीं था। चातुर्वण्य व्यवस्था में जहां चार विभिन्न वर्गों के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया गया था, वहां इन वर्गों में आपस में विवाह संबंध करने पर कोई निषेध नहीं था। किसी भी वर्ण का पुरुष विधिपूर्वक दूसरे वर्ण की स्त्री के साथ विवाह कर सकता था।' इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि बहिर्जातीय विवाह पद्धति के स्थान पर सजातीय विवाह पद्धति मूलत: जाति-प्रथा का सृजन करने के लिए ही प्रचलन में लाई गई। लेकिन सजातीय विवाह पद्धति को अबाध रूप से संचालित करना और उसे बनाए रखना कोई आसान काम नहीं था। इस प्रकिया में हिन्दू धर्म के कर्णधारों ने कई अन्य बुराइयों को जन्म दिया, जैसे सतीप्रथा, अनिवार्य वैधव्य और बाल विवाह इत्यादि। डॉ. अम्बेडकर ने 'भारत में जातिप्रथा' नामक लेख में इस समस्या पर विस्तार से विवेचन किया और यह दिखाया कि किस प्रकार सजातीय विवाह संस्था के निर्माण के लिए स्त्रियों को सती होने, आजीवन विधवा बने रहने के लिए मजबूर किया। वे बताते हैं कि सजातीय विवाह को सिर्फ इसलिये थोपा गया ताकि वर्ग/वर्ण को जाति में तब्दील किया जा सके। जो वर्ग जाति के रूप में संगठित होना चाहता है उसके लिए उस वर्ग में स्त्री-पुरुषों की संख्या समान होना अति आवश्यक है। दूसरे शब्दों में अगर सजातीय व्यवस्था को बनाए रखना है तो उसी वर्ग में ही विवाह योग्य स्त्री और पुरुषों का उपलब्ध होना जरूरी है। अगर नहीं होता है तो उस वर्ग के स्त्री और पुरुष अपने वर्ग के स्त्री तथा पुरुष अपने वर्ग या वर्ण से बाहर विवाह करने के लिए भी सजातीय व्यवस्था के अंतर्गत ही प्रबंध करना होता है, अन्यथा वे किसी अन्य जाति में विवाह करके अनुशासन भंग कर सकते हैं। डॉ. अम्बेडकर लिखते हैं कि जाति की समस्या अंतत: वर्ग में विवाह योग्य स्त्री-पुरुषों की संख्या की विषमता को दूर करने की समस्या मात्र बनकर रह जाती हैं। वे लिखते हैं, 'इस प्रकार हम देखते हैं कि जिन उपायों द्वारा स्त्री पुरुषों के बीच संख्यात्मक विषमता को नियंत्रित रखा जा सकता है वे हैं-

1. दिवंगत पति के साथ उसकी विधवा का अग्निदाह,
2. अनिवार्य वैधव्य, अग्निदाह का हल्का रूप,
3. विधुर पर अनिवार्य ब्रह्मचारी जीवन आरोपित करना, और
4. उसका विवाह ऐसी लड़की से कर देना जो विवाह योग्य न हो।

जैसा मैं कह चुका हूं विधवा का अग्निदाह और विधुर का अनिवार्य ब्रह्मचारी का जीवन आरोपित करना ये दोनों उपाय ऐसे हैं जिनके किसी समुदाय में सजातीय विवाह व्यवस्था बनाए रखने में कार्यान्वित होने में संदेह है, ये दोनों उपाय मात्र हैं। लेकिन जब यह उपाय कठोरतापूर्वक कार्यान्वित किए जाते हैं तब लक्ष्य पूरा हो जाता है। ये उपाय कौन-सा लक्ष्य पूरा करते हैं? ये सजातीय विवाह व्यवस्था का सृजन और उसे स्थाई बनाते हैं। जाति की विभिन्न परिभाषाओं में हमारे विश्लेषण के अनुसार जाति और सजातीय विवाह व्यवस्था, दोनों एक ही वस्तु हैं। इस प्रकार इन उपायों का प्रयोजन जाति और जाति-व्यवस्था में ये दोनों ही उपाय विहित हैं।[९] सतीप्रथा तथा विधवा विवाह के निषेध के संबंध में डॉ. अम्बेडकर अपने विश्लेषण के क्रम में वामन पांडुरंग काणे द्वारा लिखित पुस्तक 'धर्मशास्त्र' में व्यक्त किए विचारों को भी दृष्टिगत रखते हैं। काणे ने सतीप्रथा के पीछे स्त्रियों के उत्तराधिकार संबंधी नियमों का उल्लेख किया था। बंगाल में सती प्रथा सर्वाधिक कठोरता से लागू थी, जिसके बारे में काणे ने कहा है कि वह 'हिन्दू' कानून के तहत स्त्री पति की संपत्ति की अधिकारी होती थी। पति के घर वाले, सगे-संबंधी विधवा हो जाने पर स्त्री पर सती हो जाने के लिए दबाव डालते थे जिससे कि वे उस भाग के संबंध में मुक्त हो सकें। डॉ. अम्बेडकर ने इस तथ्य को स्वीकार तो किया कि इसी कारण बंगाल में इतने बड़े पैमाने पर सती-प्रथा का चलन रहा है, लेकिन उन्होंने कहा कि इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि यह कुप्रथा किस तरह शुरू हुई और भारत के अन्य भागों में प्रचलित हो गई। इस संदर्भ में सजातीय विवाह संस्था के द्वारा जाति निर्माण की प्रक्रिया में सती प्रथा के उद्भव के डॉ. अम्बेडकर के दावे की तथ्यपरकता सिद्ध होती है।

डॉ. अम्बेडकर के इस विश्लेषण की प्रमाणिकता तथा प्रासंगिकता इतने लंबे कालखंड के बाद वर्तमान भारत में स्वत: सिद्ध हो चुकी है। बहिर्जातीय विवाह को लेकर भारतीय समाज की असहिष्णुता, खाप पंचायतों की क्रूरताओं के पीछे के ऐतिहासिक संदर्भको अच्छी तरह समझा जा सकता है। डॉ. अम्बेडकर के विश्लेषण से हमें यह समझने में मदद मिलती है कि भारत में पितृसत्ता को जातिवादी व्यवस्था का भरपूर सहयोग मिला है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था द्वारा स्त्री को लोकतांत्रिक-मानवीय अधिकारों से वंचित रखकर उसे एक उपभोक्ता वस्तु में बदल देने की प्रक्रिया तो बाद की और परिघटना है। उससे पहले ब्राह्मणवादी व्यवस्था के अंतर्गत स्त्री की यौनिकता तथा उसके समूचे वजूद को कैद कर दिया गया ताकि भारत में जाति व्यवस्था को मजबूत नींव प्रदान की जा सके। यह आदिम सोच आज तक भारतीय समाज में गहरी जड़ें जमाये हुए हैं। यही कारण है कि जाति से बाहर विवाह करना

विशेषकर स्त्री के लिए अक्षम्य अपराध माना जाता है। जीवन व धार्मिक-सामाजिक व्यवहार के अन्य अनेक मामलों में सहिष्णु और समझौता करने को तैयार नहीं है। परिवारों में उत्तराधिकार के मामले में आज भी स्त्री के साथ पुरानी ब्राह्मणवादी रीति से ही काम लिया जाता है। डॉ. अम्बेडकर ने जाति उन्मूलन के लिए हिन्दू परिवारों में कैद स्त्री को मुक्त कराने की परियोजना पर काम किया। उन्होंने यह आत्मसात कर लिया था कि जब तक स्त्री हिन्दू कानूनों के दायरे से बाहर नहीं निकलेगी हिन्दू समाज में किसी तरह के कोई सुधार की गुंजाइश नहीं है। इसलिए उन्होंने हिन्दू कानून में परिवर्तन की बात प्रस्तावित की। हिन्दू कोड बिल डॉ. अम्बेडकर द्वारा सदियों से पारिवारिक, सामाजिक व धार्मिक जकड़न में जकड़ी हिन्दू स्त्री को मुक्त कराने का प्रयास था।

हिन्दू कोड बिल : मनु के विधान को उलटने की कोशिश – सन् 1941 में औपनिवेशिक सरकार ने हिन्दू कानून में सुधार और एकरूपता लाने के उद्देश्य से बी. एन. राव कमेटी का गठन किया था। इस समिति नेयह कहा था कि हिन्दू संहिता बनाने का समय आ चुका है। सामाजिक अग्रगति और आधुनिकीकरण के लिए हिन्दू जीवन संहिता में सुधार की जरूरत पर बल दिया गया था। बी.एन. राव ने इस संदर्भ में ड्राफ्ट तैयार किया जिसमें उत्तराधिकार, मुआवजा, विवाह और तलाक, अभिभावकत्व और गोद लेने की प्रक्रियाओं पर सुधार की बात थी। जैसा कि स्वाभाविक था इस प्रस्ताव का हिन्दू समाज द्वारा बड़े पैमाने पर विरोध प्रारम्भ हो गया। जवाहरलाल नेहरू इस प्रस्ताव को लेकर उत्साहित थे, लेकिन विरोध के कारण उन्हें पीछे हटना पड़ा। 1948 में कानून मंत्री की हैसियत से डॉ. अम्बेडकर ने इस बिल के प्रथम ड्राफ्ट को संशोधित परिवर्धित करने का काम अपने हाथ में लिया, ताकि इसे संसद में बहस करने लायक बनाया जा सके। डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में बनी सेलेक्ट कमेटी ने हिन्दू कोड बिल में वांछित सुधार किये जिसे हम आज हम हिन्दू कोड बिल कहते हैं। डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू कोड बिल में मुख्य रूप से उन प्रतिबंधों का निराकरण करने का प्रयास किया जो ब्राह्मणवादी विधान द्वारा स्त्रियों पर लगाए गए थे। उन्होंने स्त्री को तलाक के अधिकार, पैतृक संपत्ति में स्त्री के समान अधिकार, विधवा को उसके पति की संपत्ति का उत्तराधिकार जैसे प्रावधानों को लाकर मनु के विधान को उलटने का प्रयास किया। अंतरजातीय विवाह को बढ़ावा और कानूनी संरक्षण का प्रावधान भी बाबा साहब ने किया। स्त्रियों को तलाक का अधिकार एक ऐसा प्रावधान था जिस पर कट्टर हिन्दू मानस का सर्वाधिक तीखा विरोध सामने आया। जैसा कि स्वाभाविक था संसद के भीतर इस बिल का हर ओर से भारी विरोध हुआ। सदन में लगभग पचास घंटे की वहस के बाद इस बिल को एक साल के लिए ठंडे बस्ते में डाल दिया गया। 1951 में नेहरू ने डॉ. अम्बेडकर से इस बिल को अलग-अलग खण्डों में विभाजित करने का आग्रह किया, इस प्रकार चार अलग-अलग विधेयक अस्तित्व में आ गए। हिन्दू मैरिज एक्ट, हिन्दू उत्तराधिकार एक्ट, हिन्दू अल्पसंख्यक एवं अभिभावकत्व एक्ट (हिन्दू माइनॉरिटी एंड गार्जियनशिप एक्ट), और हिन्दू एडोप्शन एंड मेंटेनेंस एक्ट। नेहरू ने बीच-बचाव का रास्ता निकालते हुए यह कहा कि विवाह और तलाक से संबंधित 55 धाराओं को पारित करवा लिया जाए बाकी कानूनों को प्रथम आम चुनाव के बाद गठित नई सरकार पारित करवायेगी, लेकिन इसके बावजूद 55 में से मात्र 3 धाराओं को पारित करने की सहमति बन सकी, जिससे दुखी होकर डॉ. अम्बेडकर ने कानून मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया।

तलाक संबंधी कानून के संदर्भ में बाबा साहब के सामने हिन्दू नेताओं द्वारा संशोधन का प्रस्ताव रखा गया जिसमें यह कहा गया था कि स्त्री को विवाह के तीन वर्ष बाद तलाक का अधिकार दिया जाए और भाई को यह अधिकार दिया जाए कि वह बहन की संपत्ति खरीद सके। डॉ. अम्बेडकर ने इन संशोधनों को अस्वीकार कर दिया था। प्रथम सरकार के गठन के बाद 1952 से लेकर 1956 तक उपरोक्त चार विधेयकों को नेहरू सरकार ने पारित तो करवा लिया लेकिन उनके पीछे के मूल उद्देश्य को धूमिल कर दिया। और जिन सुधारों को बाबा साहब अंजाम देना चाहते थे वे अधूरे ही रह गए। सन् 2005 में स्त्री को पैतृक संपत्ति में अधिकार तो दे दिया गया, लेकिनहिन्दू परिवार और समाज आज भी इस सुधार के लिए खुद को तैयार नहीं कर पाए हैं। भारत में स्त्री मुक्ति के आंदोलन के लिए बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के ये विचार आज भी प्रेरणास्रोत की तरह हैं। ब्राह्मणवादी व्यवस्था के चंगुल से स्त्री को मुक्त करना भारत के नारी आंदोलन का प्रमुख कार्यभार है। पितृसत्ता से मुकम्मल मुक्ति के लिए जरूरी है मनुवादी व्यवस्था का उन्मूलन। इस तरह भारत में जाति उन्मूलन और नारी मुक्ति की लड़ाई एक सहधर्मी लड़ाई बनकर उभरती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नारी और प्रतिक्रान्ति, पृ.सं. 334, बाबा साहब अम्बेडकर सम्पूर्ण वांग्मय खण्ड-7, द्वितीय संस्करण : अप्रैल 1998, डॉ. अंबेडकर प्रतिष्ठान, कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
2. ब्राह्मणवाद की विजय पृ.सं. 197.
3. कास्ट्स इन इंडिया: देयर मेकैनिज्म, जेनेसिस एंड डेवलपमेंट।
4. भारत में जातिप्रथा (Essays and speeches compiled in Dr. Babasaheb Ambedkar: Writings and Speeches) – Government of Maharashtra publication
5. शारदा कबीर (मेहता) – *Religion, Caste and Gender: Ambedkar's Perspective*
6. शरण कुमार लिंबाळे – *Towards an Aesthetic of Dalit Literature* (अम्बेडकर की स्त्री दृष्टि पर भी चर्चा)
7. Christophe Jaffrelot – *Dr. Ambedkar and Untouchability: Fighting the Indian Caste System*
8. हिन्दू कोड बिल से सम्बन्धित संसदीय बहस (1948-1951)
9. B.N. Rau Committee Report (1941-42)

****